पंचम अध्याय

"विवेच्य नाटकों में चित्रित राजनीतिक संदर्भ"

पंचम अध्याय

'विवेच्य नाटकों में चित्रित राजनीतिक संदर्भ '

5.1 प्रस्तावना -

कबीर युगीन समाज की राजनीतिक अवस्था अत्यंत पतनावस्था में पहुँची थी। इस काल में धर्म का प्रसार तथा सत्ता हासिल करने के नामपर अनेक अनैतिक बातों की भरमार मची हुई थी। तत्कालीन सामान्य जनता उनकी शासक वर्ग, सेठ साहुकारों की मिलीभगत से त्रस्त होकर अपना जीवन व्यतीत कर रही थी। स्वार्थी, भ्रष्टाचार के पुतले शासक वर्ग के द्वारा समाज को दंड़ित होना पड़ता था। जनता अन्याय और शोषण की चक्की में पीसती जा रही थी। समाज में अन्याय, अत्याचार के खिलाफ लड़नेवालों के होंठ झुलसा दिए जाते थे। कबीर काल की इस राजनीतिक स्थिति की प्रतीति कबीर जीवन पर आधारित हिंदी नाटकों में पाई जाती है।

इस प्रकार कबीर कालीन राजनीतिक परिस्थिति बहुत सुसह्य नहीं थी। आम जनता राजनीतिज्ञों के अत्याचारों से त्रस्त पाई जाती है। वर्तमान राजनेताओं में कोई खास फर्क नहीं हुआ है। वह भी अपने कुर्सी के लिए जनता की जिंदगी दांव पर लगाते हुए पाये जाते हैं।

5.2 राजनीति एवं राजनेता -

राजनीति समाज जीवन का महत्वपूर्ण क्षेत्र माना जाता है। समाज का हर एक घटक जीवन में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से राजनीति से प्रभावित पाया जाता है। राजनीति में महत्वपूर्ण घटक है राजनेता। राजनेता राजनीति का उपयोग अपने निजी स्वार्थ हेतु करते हुए पाये जाते हैं। ऐसे राजनेताओं की वजह से राजनीतिक व्यवस्था भ्रष्ट हो चुकी है। भ्रष्ट राजनेता चुनाव में वोट हासिल करने के लिए तथा शहर के साथ ही

गांव में भी धार्मिक तथा जातिय संघर्ष उत्पन्न कर उनकी सांप्रदायिकता को बढ़ाते नजर आते हैं। ऐसे आचरण से पतित नेता कपटनीति का उपयोग कर 'जनसेवा' के नाम पर खुद के स्वार्थ के पीछे भागते दिखाई देते हैं।

यह नेतावर्ग कबीर के युग में भी था। सत्ता और धर्म की साँठ गाँठ से एक ओर संपन्न वर्ग निम्न वर्ग को अपने कारणामों से त्रस्त करता है तो दूसरी ओर सत्ताभिमुख राजनीति से राजनेता सामान्य वर्ग का उपयोग अपनी सत्ता सलामत रखने में करते हैं। कबीर जीवन पर आधारित नाटकों में इन राजनीतिक समस्याओं का चित्रण प्राप्त होता है।

5.3 नेताओं का दोगला रूप -

सामान्यत: जनता का प्रतिनिधित्व करनेवाले व्यक्तिं को 'नेता' की उपाधि दी जाती है। ऐसा माना जाता है कि नेता जनता के लिए अपना सर्वस्व त्याग देता है। लेकिन सरल दृष्टि से देखा जाय तो अपने स्वार्थ के लिए नेतागण दूसरों की बली चढ़ाने में नहीं हिचकिचाते हैं। यह स्वार्थी नेतावर्ग सुविधाजीवी, अवसरवादी तथा जनता का शोषण करनेवाले हैं। जो सत्ता हथियाने के लिए एक दूसरे को दबोचते रहते हैं।

नाटककार मणि मधुकर ने अपने नाटक 'इकतारे की आँख' में तत्कालीन समाज में शासक वर्ग तथा पूँजीपति वर्ग की साँठ गाँठ से त्रस्त समाज की पीड़ा का वर्णन कथा गायन के माध्यम से दर्शाया है।

> "कासी कोतवाल की, कासी साहुकार की,
> कासी राजा की और कासी कंस कथा की,
> प्रजाजनों के गुँगेपन से भरी व्यथा की।"[1]

SHIVAJI UNIVERSITY, KOLHAPUR

इस प्रकार शासक वर्ग तथा नेता एकदूसरे से हाथ मिलाकर अवसर आने पर पहले अपना कार्य पूरा करने के उपर ध्यान देते हैं। प्रजा तथा जनता की समस्याओं की तरफ बिल्कुल ध्यान नहीं देते। चुनाव में जनता को अधिक महत्व देनेवाले चुनाव के बाद उनकी तरफ देखते तक नहीं।

5.3.1 स्वार्थी नेता -

नेता लोग राजनीति में प्रवेश ही इसलिए करते हैं कि उनके स्वार्थ की पूर्ति हो। समाज में ऐसे नेता भी पाये जाते हैं जो सिफ स्वार्थ के लिए ही राजनीति का इस्तमाल करते हैं। सत्ताधारी पक्ष तथा विरोधी पक्ष जनसेवा के नाम पर अपना स्वार्थ सिद्ध करते हैं।

'इकतारे की आँख' नाटक की कबीर लाल की परिस्थिति इससे कुछ अलग नहीं पायी जाती। समाज के असहाय लोगों पर होते अन्याय को देखकर कबीर काशी छोड़कर चले जाते हैं। अपने घर से दूर रहने पर उन्हें हर तरफ यही दिखाई देता है कि स्वार्थी नेतावर्ग (कोतवाल, उचचवर्गीय) अपने खिलाफ उठनेवाली बगावत को आवाज को दबा देते हैं। अपने स्वार्थ पूर्ति के लिए वे असहाय लोगों पर अत्याचार करते हैं। "लोग जिंदगी की बातें करते हैं और मौत में रहते है।"[2] नेतावर्ग गरीबों के मुँह का कौर छीनकर स्वयं बड़े हो जाते हैं, ऐशो आराम की जिंदगी बिताते हैं। अपनी अमीरी में धुत्त बादशाह सिकंदर लोदी को कबीर बड़ा ही सही जवाब देते हुए कहते हैं, तुम जो ऐश्वर्य उपभोग रहे हो उसके पीछे गरीबों के आँसू छिपे हुए हैं। अपनी संपत्ति पर घमंड करना छोड़ दो क्यों कि यह संपत्ति गरीबों की ही है। जो उनसे छीन ली गई।

'कबिरा खड़ा बजार में' भी इसी स्थिति के दर्शन होते हैं। इस नाटक का कायस्थ ब्राह्मण जाती का प्रतिनीधित्व करता है। वह उनका नेता ही है। वह हिंदू

होकर भी मुसलमान कोतवाल से हाथ मिलाकर अपने स्वार्थ की पूर्ति करता हुआ पाया जाता है। समाज में एकता प्रस्तापित करने के लिए, पाखण्ड को मीटाने के लिए प्रयत्न करनेवाले कबीर को कायस्थ अपने स्वार्थी तरीके से समझाना चाहता है। वह कबीर से कहता है हिंदू तथा मुसलमान दोनों को नाराज करना बड़ी नादानी है। एक समय में एक का साथ तथा दूसरों का विरोध करने से कम से कम एक तो अपने साथ होगा। मंदिर वालों का तथा मसजिद वालों का दोनों का विरोध करने से दोनों धर्म के लोग कबीर पर नाराज हो जाते हैं। कबीर एकसाथ दोनों को भी अपना दुश्मन बना लेते हैं। तब अपने स्वार्थ के लिए कायस्थ कबीर का इस्तमाल करना चाहता है। वह कबीर से कहता है, ''एक वक्त में एक का समर्थन करो, दूसरे का विरोध इस तरह से दोनों से तुम्हें लाभ पहुँच सकता है।''[3] समाज के सामान्य जन ब्राह्मणों के खिलाफ न हो जाए इसलिए कायस्थ कबीर को लोगों को कवित्त न सुनाने तथा लोगों को उच्चवर्णीयों के खिलाफ न भडकाने की सलाह देता है। गिरगिट की तरह रंग बदलना सत्ताधारियों की महती विशेषता होती है। जो कोतवाल और कायस्थ कबीर को विद्रोही मानकर कष्ट देने का प्रयत्न करते थे वही, कबीर की हैसियत बढ़ने पर उनकी खुशामद करने सबसे आगे बढ़ते हैं।

तात्पर्य, समाज के अवसरवादी नेतागण समाज के सामान्य लोगों को पहचानते तक नहीं तथा जीनके कष्टों का निवारण तक नहीं करते, वही नेतागण चुनाव आनेपर तक अपनी कार्यपूर्ति के लिए सामान्य जन को सरआखों पर बिठाते हैं।

5.?.2 प्रसिद्धी की चाह -

राजनीति के नेतागणों में अवसरवादीता के साथ साथ प्रसिद्धी की चाह भी पायी जाती है। चुनाव के पहले अपने नाम का प्रसार करने के लिए बड़े बड़े होर्डिंग्ज लगाए जाते है तथा बड़े बड़े चैनलों पर मुलाकात प्रसिद्ध कराई जाती है। चुनाव जीत जाने

पर भी वह प्रसिद्धी का एक ही मौका नहीं छोड़ते। नेतावर्ग की इस बिमारी को मणि मधुकर के नाटक के नेता ठाकूर विनायकप्रसाद नारायण सिंह, व्ही.आय.पी. नेता हैं। कबीरपूर से चुनाव जीतनेवाले यह नेता कबीरत्राणी प्रचार सभा के आजीवन अध्यक्ष हैं। अपनी प्रसिद्धी के लिए वे नाटक कंपनी को आर्थिक सहायता करते हुए पाये जाते हैं। स्वयं की प्रसिद्धी के वे इतने आग्रही हैं कि नाटक के प्रारंभ में गणेशवन्दना को हटाकर 'स्वयं की वन्दना' लिखवाते हैं। परिस्थिति से मजबूर निर्देशक गणेश वन्दता के स्थान पर 'विनायकजी की वन्दता' फिट कर देता है।

उसी प्रकार 'सज्जन एक' तथा 'सज्जन दो' को भी अपने प्रसिद्धी की चाह है। कबीर के नाटक की रिहर्सल के समय मंच पर आकर जबरदस्ती अपना सम्मान करवाते हैं। निर्देशक को मश्वरा दिया जाता है कि नाटक के प्रारंभ में वे दोनो भाषण करेंगे तथा नाटक के निमंत्रण पत्र पर उनके नाम-छापावाये जाए।

इस प्रकार अनुमान निकाला जाता है कि नेतागण जनता की समस्याओं को सुलझाने के बजाय अपनी प्रसिद्धी को महत्व देते हैं ताकि चुनाव में उसका लाभ हो जाए।

5.3.3 सांप्रदायिकता को बढ़ावा देनेवाले नेता -

देश के नेतागण समाज में एकता स्थापित करने के बजाय अपने स्वार्थ सिद्धी के लिए समाज की दो जातियों, दो धर्मो के बीच शत्रुता की भावना को बढ़ाने का कार्य इमान एतबार से करते हैं। वे खुद के धर्म को सर्वश्रेष्ठ मानकर दूसरों के धर्म को तुच्छ, होन समझते हैं। ताकि दो धर्मी के लोग आपस में लढ़कर मरे और ये अपना स्वार्थ पूरा कर सके। परंपरा से यही होता आ रहा है। ये कबीर काल में भी होता था।

नाटककार नरेंद्र मोहन के नाटक 'कहै कबीर सुना भाई साधो' में नगर कोतवाल

ऐसे नेताओं का प्रतीक है। जो विभिन्न जातियों धर्मो में संघर्ष पैदा करता रहता है। वह हिंदू मुसलमानों में जानबूझ कर दंगाफसाद करवाता है। कबीर और उसके साथी साधु और पंडितों की नुक्ता चीनी करते हैं। कसाई मोहल्ले के जुलाहे, कुम्हार, भिश्ती, भंगी सरेआम इस्लाम के उसुलों के खिलाफ बोलते हैं, मुल्ला मौलवी तथा उनकी अजान को लताडते हैं, इस बातपर आग बबुला हुए मौलवी तथा मुल्ला इन लोगों को बुरी तरह से पीटते हैं, उनके घर जला दिये जाते हैं।

साधु कोतवाल से विधर्मी लोगों की शिकायत करते हुए कहते हैं, ''धर्म रसातल को जा रहा है, हुजूर इन विधार्मियों को दमन किजिये।''[4] तभी कोतवाल उन्हें डाँटफटकारकर हवालात में बंद करने का हुक्म देता है। कोतवाल भी ढ़ील की वजह से ही इस्लाम के नीची जातिवाले लोग स्र उठाने की कोशिश करते पाये जाते हैं। काशी के महंत तथा मुल्ला मौलवी अपने धर्म का उपयोग लोगों को अलग करने के लिए बखुबी से करते पाये जाते हैं। अपने धर्म, जाति को सर्वश्रेष्ठ माननेवाले महंत, इस्लाम धर्मीय मुल्ला मौलवियों को अपने से हेय समझते हैं। वह एक दूसरे के स्पर्श से तक दूर रहते हैं। इसकी वजह से एक दूसरे में अविश्वास की भावना का उदय होता है। इससे दंगाफसाद होते हैं। स्वार्थी नेतागणों (कोतवाल, महंत, कायस्थ आदि) की स्वार्थी मनोवृत्ति के कारण निरपराध लोगों को मौत का शिकार होना पड़ता है। स्पष्ट है सामाजिक ऐक्य की दृष्टि से नेताओं की यह नीति घातक ही सिद्ध होती है।

5.3.4 भ्रष्टाचार का प्रतीक -

नेतावर्ग अपनी बुद्धि का उपयोग अपनी कार्यसिद्धी के लिए करते हैं। उनके अस्तित्व में जनहित की भावना कम और स्वहित की भावना प्रबल होती है। ऐसे आत्मकेंद्री, सत्तालोलुप, भ्रष्ट आचरण के नेताओं द्वारा जनहित की आशा करना व्यर्थ है। अपने स्वार्थ के लिए वे किसी भी हदतक गीर सकते हैं। ऐसे भ्रष्ट नेताओं की

वजह से पूरी राजनीतिक व्यवस्था भ्रष्ट और पतित हो गई है। मणि मधुकर के 'इकतारे की आँख' नाटक में एक ऐसा ही भ्रष्टाचार का प्रतीक है ठाकूर विनायकप्रसाद सिंह।

ठाकूर साहब ने तो राजनीति में भ्रष्टाचार करने की हद कर दी है। ठाकूर विनायकप्रसाद नारायण सिंह जाने माने राजनीतिज्ञ हैं। उनका चरित्र भी उतनाही भ्रष्ट है। वह नाटक की अभिनेत्री को अपने घर पर आशीर्वाद देने बुलाते हैं। ताकि वे उसका शोषण कर सके। अपनी खुर्सी का वो गलत उपयोग करते हुए पाये जाते हैं। जो उनका कहना नहीं मानते उन्हें वे कुचलकर रख देते हैं। निर्देशक के संवादो से यह बात दृष्टिगोचर होती है. "वह महाप्रतापी हैं, घट घट व्यापी हैं, उन्हें जो नहीं जानेगा, बे मौत मरेगा।"[15]

पहले एक उपचुनाव में विधायक बने, समाज कल्याण बोर्ड के चैयरमैन विनायकप्रसाद सिंह एक माह गुजरने के बाद मंत्रिमंडल में जाते हैं। तथा अपनी भ्रष्ट नीति का पूरा उपयोग कर खाद्यविभाग पर सुशोभित हो जाते हैं। अपने तोड़ फोड़ नीति तथा कुकृत्यों के बलपर तत्कालीन मुख्यमंत्री को भूतपूर्व सम्मानपत्र प्रदान कर, दिया प्रतिक्रियावादी शक्तियों को लंगोट में बांधकर दाने दाने के मुहताज सुबे के सरताज बन जाते हैं। परमप्रतापी ठाकूर साहब को अपनी भ्रष्टाचार की भूख मिटाने के लिए शासकीय डिपार्टमेंट भी अधुरे लगते हैं। वे उनपर भी हाथ साफ कर देते हैं। उनकी इस भ्रष्टाचारी वृत्ति को मणि मधुकर गायकों द्वारा व्यक्त करते हैं।

गायक एक : लंच में हजम कर गए
सारे खेत बीज भण्ड़ार
गायक दो : ड़िनर में कपड़ा, तेल, धातु और पूरा ही बाजार।"[16]

भीष्म साहनी के 'कबिरा खड़ा बजार में', नाटक का कोतवाल भी भ्रष्टाचार का

प्रतीक है। काशी के आखाड़े के प्रसिद्ध महंत जिनकी शोहरत दूर तक फैली हुई है; कोतवाल को रिश्वत देकर मठ की जमीन अपने नाम करवा लेते हैं। मगर उस जमीन के ऐन सामने नीच लोगों की बस्ती होती है, इन शूद्र, ड़ोम, चमारों को कर्मठ महन्त कोतवाल को रिश्वत देकर वहाँसे हटाना चाहता है। रिश्वतखोर कोतवाल भी उनकी इच्छा पूरी करने का आश्वासन देता है।

इस प्रकार भ्रष्टाचारी नेता वर्ग अपनी आत्मकेंद्री मानसिकता की वजह से अपनी नैतिक अनैतिक की सोच गँवा बैठता है तथा अपनी आत्मकेंद्री महात्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए घिनौने मार्ग अपनाता है।

.4 राजनीति का सामाजिक अंगोंपर प्रभाव -

राजनीति एक ऐसा क्षेत्र है जिसका प्रभाव समाज के हर एक अंगपर पड़ता है। ोटी से छोटी बातें भी इस क्षेत्र से अछूति नहीं रहती। रेडिओ, टि.व्ही., वृत्तपत्र आदि ो जनसंपर्क के महत्वपूर्ण माध्यम हैं वह राजनीति के अच्छे तथा बुरेपन से प्रभावित ये जाते हैं जिनमें युवा वर्ग, बुद्धिजीवी लोग आदि का समावेश होता है। जनीति से समाज का सबसे ज्यादा प्रभावित अंग है युवावर्ग।

4.1 युवावर्ग पर असर -

युवावर्ग स्वस्थ समाज की नींव है। अगर रसमाज के युवावर्ग का बर्ताव उचित तो समाज में समस्याएँ अपने आप कम हो जाती हैं। अगर युवा वर्ग ही गुंडे, ाली तथा स्वार्थी राजनीतिज्ञों के कुप्रभाव से ग्रासित होता है तो समाज के विकास में क बाधाएँ खड़ी हो जाती हैं। नेतागणों का ज्यादातर असर युवावर्ग पर ही पाया ा है। नेतागण युवावर्ग के 'हीरो' बन जाते हैं। नेताओं का इतना जबरदस्त असर कोंपर होता है कि वह भी अपनी आनेवाली जिंदगी में नेता बनने का ख्वाब देखने

लगते हैं। देश का युवक ही देश का वर्तमान और भविष्य है।

युवापीढ़ी अपने चारों ओर भ्रष्टाचार, महँगाई, रिश्वतखोरी का अनुभव करती है। वह देखती है कि किस प्रकार नेतावर्ग चुनाव जीतने के लिए साम, दाम, दंड नीति का प्रयोग करता है। वह भी इन सारी बातों से प्रभावित हो जाती है। तथा उनके कदम पर कदम रखकर चलने की कोशिश करती है। 'इकतारे की आँख' नाटक का छात्रसंघ का नेता राजनीति तथा नेताओं के व्यवहार से काफी हद तक प्रभावित है। राजकीय नेतागणों की तरह जनता के संपर्क में रहने का हर एक माध्यम वह अपनाता है। रेड़िओ, टेलीविजन, दीवारोंपर लगे बड़े बड़े पोस्टरों के जरिए जनता के संपर्क में रहने का कार्य वह सुचारू रूप से करता है। स्वयं को छात्रसंघ का अखंड प्रचंड नेता माननेवाले युवक पर राजनीतिक पार्टियों का गहरा असर है। इसलिए कबीर पर नाटक निर्देशित करनेवाले निर्देशक को कबीर की पार्टी के बारे में पुछता है। वह जानना चाहता है कि कबीर किस पार्टी के नेता थे। इसका उपयोग वह युनिव्हर्सिटी इलेक्शन में करना चाहता है। निम्न संवादों से यह स्पष्ट होता है, "कबीर क्रांतिकारी है तो किस पार्टी का क्रांतिकारी है — जनता, कॉंग्रेस, कम्युनिस्ट पाटी, फॉरवर्ड ब्लॉक....।"[7]

इसप्रकार यह दृष्टिगोचर होता है कि जिस प्रकार नेतावर्ग कबीर जैसे महान संत का उपयोग अपने फायदे के लिए, वोट हासिल करने के लिए करते है ठिक उसी प्रकार उनसे प्रभावित युवावर्ग भी अपने निजी स्वार्थ के लिए कबीर का उपयोग करता है। इससे नेतागणों का युवा पीढ़ी पर हुआ असर स्पष्ट होता है।

5.4.2 दिशाहीन युवापीढ़ी -

राजनीति में नेतावर्ग तथा अन्य अधिकारी वर्ग अपना मकसद पूरा करने के लिए युवकों का उपयोग करते हैं, उन्हें अपने इशारोंपर नचाते हैं। उन्हे मोहरा बनाकर उनका

इस्तेमाल करते हैं। मगर अपना मकसद पूरा होते ही वह दूध में पड़ी मक्खी की तरह उठाकर उन्हें बाहर फेंक देते हैं। नेतागणों के इशारों पर नांचनेवाले युवक यह नही तय कर पाते कि क्या सही है तथा क्या गलत। चुनाव में जीत हासिल करने के लिए नेता हर एक मार्ग को अपनाते हैं। वे वोट हासिल करने के लिए नये नये तरीके ढूँढ़ते हैं। लोगों का अपहरण कर ले जाते हैं तथा वोटिंग करने तक उन्हे अज्ञातवास में रखते हैं। वोट देने वाले को तरह तरह के लोभ दिखाये जाते हैं। उन्हें पैसों से खरीदने की कोशिश की जाति है। ठीक उसी प्रकार उनका आदर्श अपनाकर युवापीढ़ी भी उन्हीका अनुकरण कर रही है। स्कूल, कॉलेज, युनिव्हर्सिटी में इलेक्शन आनेपर वोट देने वालों का अपहरण किया जाता है। उन्हें तरह तरह के लालच दिखाकर अपनी तरफ खींचा जाता है। अगर तब भी वह न माने तो उनहें धमकाया जाता है।

मणि मधुकर के 'इकतारे की आँख' नाटक का 'युवक जो छात्रसंघ का नेता होनेवाला है वह दिशाहीन युवापीढ़ी का सर्वोत्तम उदाहरण है। वह कबीर जैसे ऐतिहासिक पात्र का उपयोग अपने फायदे के लिए करना चाहता है। वह निर्देशक को धमकाता है कि अगर उसने यह नही बताया कि कबीर किस पार्टिका है तो छात्रशक्ति की सहायता से वह अनगिनत नुकसान कर देगा। निम्नांकित संवाद इस बात को स्पष्ट करता है।

"युवक : आपको अपना स्टैंड बिल्कुल क्लियर करना होगा, नहीं तो 'शो' के समय कुर्सियाँ टूटेंगी, बिजली के लट्टू फुटेंगे, हो सकता है मुख्य अभिनेत्री का अपहरण भी कर लिया जाए।"[8]

इस प्रकार युवा पीढ़ी पर राजकीय नेताओं का बुरा असर पडने से वह दिशाहीन हो जाती है। नेता वर्ग के पीछे भागनेवाली पीढ़ी उनके स्वार्थ को नहीं पहचान पाती और स्वंय दिशाहीन हो जाती है।

5.4.3 बुद्धिजीवी चाटुककारों की पलटन -

दुनिया का उसुल है कि उगते हुए सूरज को सलाम किया जाता है। राजनीति में कोई नेता बना नहीं कि उसके चमचों की फौज तैयार हो जाती है। अपने नेताओं की स्तुति कर उनके आशीर्वाद से अपनी स्वार्थपूर्ति का एक भी मौका वह नहीं छोडते। यह कार्य बडे प्रामाणिकता से करते हुए दिखाई देते हैं। यह चापलुसी क्रिड़ाविश्व तथा विश्वविद्यालय में भी पायी जाती है। 'इकतारे की आँख' नाटक में बुद्धिजीवी वर्ग की चापलुसी की प्रवृत्ति का सटीक चित्रण किया गया है। कबीर पर नाटक करनेवाला निर्देशक और अभिनेत्री नाटय संस्था को वेत्तिय सहाय्यता दिलवाने तथा विभिन्न पुरस्कार प्राप्त करवाने के लिए आइ.ए.एस. ऑफिसर बुखारीचन्द गुप्ता की चापलुसी करते हुए पाये जाते हैं। वह हर एक प्रकार से अपने वरिष्ठों को खुश करना चाहते हैं।

कवि एक तथा कवि दो ऐसे ही चाटुककार हैं जो कोतवाल की चापलुसी कर नानाभाँति के पुरस्कार प्राप्त करते हैं। कोतवाल को कवि शिरामणी के स्वामी तथा सर्वशक्तिमान की उपमा देते हुए स्वयं का स्वार्थ साध्य करते हुए दृष्टिगोचर होते हैं। कोतवाल को शहंशाह सिकंदर लोदी के परम विश्वासपात्र बताते हुए उन्हें हिमालय तथा हिंद महासागर की उपाधि प्रदान करते हैं। सूअर की तरह दिखनेवाले कोतवाल के चेहरे का कलात्मक चित्रण कर कोतवाल को मेहरनजर का लाभ उठाते पाये जाते हैं। वे कहते हैं, "कोतवालजी सर्वशक्तिमान हैं। सूर्य और चंद्रमातक को आदेश देते हैं वे जरा अनुशासित रहकर धूप और चाँदनी बिखेरें।"[9] इस प्रकार सूर्य तथा चंद्र को भी वे कोतवाल के अनुशाषित बनाते हैं।

सत्ताधारियों के फालतू नखरों को भी सर आँखो पर रखा जाता हैं। झूठी शान तथा पैसों के बलपर अन्य क्षेत्रों के साथ साथ क्रिड़ाविश्व तक को खरीदा जाता है। 'इकतारे की आँख' के मंत्रिमंडल के सदस्य ठाकुर विनायकप्रसाद सिंह ऐसे ही नेतागण

हैं जो पैसों के बलपर फुटबॉल मैच की फिक्सींग कर स्वयं का मनोरंजन करते दिखाई देते हैं। निम्न संवाद इस बात को स्पष्ट करता है,

> "दोनों टीमें घटों तक खेलती रही पर गोल न कर सकी . .
> बाद में पता चला वे खामखा मैदान में झक मार रही थीं। ...
> क्यों कि उनकी गेंद ठाकुर साहब के जेबों में थी।"[10]

इस बात से यह जानकारी प्राप्त होती है कि किस प्रकार मंत्री तथा ऊँचे ओहदे के लोगों की चापलुसी की जाती है। पुरे क्रिडा विश्वपर ही नहीं बल्कि विश्वविद्यालय के हिस्ट्री तथा हिंदी के प्रोफेसर भी विनाय प्रसाद जी से प्रभावित हैं। विनायक जी को खुश करने के लिए प्रोफेसरों ने इतिहास ही बदल दिया है। उनकी मान्यता है कि "ठाकुर साहब के एक पुरखे ने कबीर को जीवनदान दिया था।"[11] संशोधकों के मतानुसार कबीर हर बार ठाकुर रसाहब के पुरखेराम के शिकंजे से छुटते रहें और उन्हें जीवनप्रदान मिलता रहा।

इस प्रकार हर नेता के पिछे चाटुककारों की पलटन पायी जाती है। वह नेताओं के ऊँचे ओहदे का उपयोग अपनी झोली भरने के लिए करते हैं। यहाँ तक की इतिहास को भी बदल डालते हैं।

5.5 प्रशासक वर्ग :

कबीरकालीन शासक जनधर्मी न होकर ज्यादातर निरंकुश ही थे। प्रजा के हित का विचार करने के बजाय वह अपने हित का ही ज्यादा विचार करते थे। अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए वह सारी प्रजा की जिंदगी दांव पर लगा देते थे। अगर ऐसे हठीले, सत्ताधारी शासकों के उद्देश्यपूर्ति के लिए उनके सामंत, वजीर, अमीर, उमराव सहाय्य करते थे तो प्रसन्न होकर सत्ताधारी शासक उन्हे लाखो रूपये, सैंकडो गांव प्रदान करते

। मगर किसी भी वजह से शासक अपने राजदरबारियों पर नाराज हो जाए तो एक ही क्षण में उनके सारे ऐश्वर्यों को छीनकर उन्हें रास्ते पर लाकर खड़ा कर देते थे। अपनी स्वार्थ सिद्धी में सहाय्यता करनेवालों पर उनकी मेहरनजर होती थी। जो इन निरंकुश सत्ताधारियों के विरूद्ध खड़ा हो जाता था उसे शासक वर्ग या तो मौत के घाट उतारता था फिर हवालात में ड़ाल देता था। असहाय, बेसहारा लोगों में तानाशाहों के खिलाफ आवाज उठाने की हिम्मत नहीं होती थी इसलिए वह आये दिन शासकों के जुल्म, अत्याचार को चुपचाप सहते हुए नरकीय जीवन बिताते थे। अगर कोई ऊँची आवाज में इस जुल्म, अत्याचार का विरोध करता था उसकी आवाज को कुचल दियाा जाता था।

भीष्म साहनी द्वारा लिखित 'कबिरा खड़ा बजार में' नाटक में इसी बात को दर्शाया है। जुल्म से लड़ने वाले कबीर पर अनगीनत अत्याचार किये जाते हैं। गरीबों, लाचारों की तरफ से अत्याचारी लोगों के विरूद्ध खड़े होनेवाले कबीर की पीठ कोडों की मार से छलनी कर दी जाती है। शासकों की इस निरंकुशता से परिचित कबीर की माँ नीमा कबीर को चुप रहने की सलाह देते हुए कहती है –

''नीमा : तू यह क्या करता फिरता है कबिरा, मेरा दिल दहलता है। जीन लोगों के हाथ में ताकत होती है, उन लोगों के दिल में रहम नहीं होता, बेटा! तू अपनी औकात देख ... तू सुनकर अनसुनी कर जाया कर, पर मुँह से कुछ न बोला कर...।''[12]

सेना के पूछने पर बशीरा अपने जन्म की तथा अपने खानदान की कहानी सुनाता है। उसके प्रत्येक वाक्य से तत्कालीन शासकों की मग्रुरता और तानाशाही उभरकर पाठक के सामने आती है। किस प्रकार दिल्ली का बादशहा मोहम्मद बिन तुगलक दौलताबाद पर चढ़ाई करने का हुक्म देता है। सिपाहियों के मन में न होते हुए भी वह

उन्हे जबरदस्ती अपने साथ युद्ध के लिए ले जाता है। दिल्ली पर जब बादशाह तिमुर लंग की हुकूमत आती है तो जनतापर शामत आ जाती है। यह मजहबी बादशहा अल्लाह का नाम लेकर तलवार उठाता है तथा लोगों को अगले जहाज पहुँचा देता है।

कबीरकालीन सिकंदर लोदी भी तानाशाही का प्रतीक है। अपने साम्राज्य विस्तार के लिए वह हजारों हिंदुओं को मौत के घाट उतारता है। बिहार **पर** विजय पाकर उसके मतानुसार वह दीन की खिदमत करता है। कबीर इस बात पर कबीर का तीव्र विरोध निम्न वाक्य से स्पष्ट होता है –

"कबीर : दीन की हिफाजत! हत्या करनेवाला हत्यारा कहलाता है सुलतान"[13]

कबीर कालीन शासक अपने ही मग्रुर, निरंकुश स्वभाव में मस्त रहते थे। उन्हे प्रजा की परीस्थिति से कोई लेना देना नहीं था। शासित जनता को हर एक प्रकार से त्रस्त करना ही उनका एकमेव ध्येय था। उन्हे सही गलत को बोध करानेवाले तथा उनके खिलाफ आवाज उठानेवालों को अपनी हुकूमतद्वारा कुचल दिया जाता था। अपने प्रजा की पतनावस्था तथा मगहर में होनेवाली महामारी, भूखमरी तथा अकाल की कल्पना सुलतान को देनेवाले बोधन की सुलतान के इशारे पर हत्या कराई जाती है। इस प्रकार बेरहम सुलतान की तानाशाही उभरकर सामने आती है।

निष्कर्ष में कहा जा सकता है कि, कबीरकालीन तानाशाह अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए सामान्य जनता को मौत के घाट उतारते थे तथा उनके इस कार्यपर उन्हें कदापि पश्चाताप नहीं होता था।

5.5.1 शासक वर्ग की कपटनीति -

कपटनीति हर युग के शासक वर्ग की विशेषता रही है। **अपने** दुश्मनों को हाथियाने के लिए वह इस नीति का अवश्य प्रयोग करते हैं; परंतु कभी कभी तो वह

सामान्य जनता से भी इसी नीति से पेश आते हैं जिससे सामान्य जनता नाहक ही परेशान होती है। मध्ययुग के अत्याचारी शासक अपने विरूद्ध उठायीं गयी आवाज को अपना दुश्मन समझते थे। और उसे दबाने के लिए कपटनीति का प्रयोग करते थे। उनके दरबार में रहनेवाले बिकाऊ जासूसों का उपयोग कर वह अपने हितशत्रू को जाल में फँसाते थे।

नरेंद्र मोहन के नाटक 'कहै कबीर सुनो भाई साधो' में यही बात दर्शायी गयी है। कबीर के व्यवहार से त्रस्त सिकंद लोदी अपने जासूसों द्वारा कबीर पर पाबंदी लगाता है। होशियार सिकंदर लोदी को जब यह पता चलता है कि इस्लाम के उसुलों के खिलाफ बोलने वाला कबीर शेख तकी को गुरू का दर्जा देता है तो वह कबीर को उसके पास लाने की जिम्मेदारी शेख तकी पर सोंप देता है। वह कपटनीति से कहता है, "सुना है अक्खड़ है। आप उसे फुसलाकर ला सकते हैं।"[14] कैदी होते हुए भी कबीर सिकंदर लोदी के सामने सीना तानकर खड़े होते हैं। सुलतान के विरूद्ध बगावत करनेवाले को सुलतान देहदंड देना चाहता है मगर सत्यवादी कबीर से समाज के लोग बड़ी तादात में जुड़े रहने के कारण बादशाह कबीर को फाँसी की सजा नहीं सुना पाते। मगर कुटनीति का बादशाह सिकंदर लोदी कबीर तथा रमजनिया के संबंधों को अनैतिकता का करार देते हुए बदनाम करने की कोशिश करता करता है। ताकि इस वजह से लोगों के दिल में कबीर बारे में नफरत पैदा हो।

.6 प्रशासकों का अत्याचार -

कबीर काल में शहरों की देखभाल तथा सुरक्षा पर नजर रखने के लिए कोतवाल की नियुक्ति की जाती थी। शहर की देखभाल करते हुए अपराधियों को सजा देने का हक भी कोतवाल को दिया जाता था। परंतु ये कोतवाल अपने हक का दुरूपयोग कर उसका हथियार के रूप में उपयोग करते थे। जरा जरा सी बात पर भी भारी से भारी

सजा दी जाती थी। जनता के द्वारा होनेवाले जरा से विरोध पर भी मृत्युदंड की सजा दी जाती थी। सेठ साहुकारों से मिलकर सामान्य जनता पर अन्याय करना तथा उन्हें दंड़ित करने का कार्य कोतवाल करते थे। यह कोतवाल क्रूर, स्वार्थी, वासनालोलुप, समाज का शोषण करते हुए दिखाई देते हैं। 'कबिरा खड़ा बजार में' नाटक का कोतवाल इसका ज्वलंत उदाहरण है। वह सड़क पर चलनेवाले तीन राहगीरों को नाहक हाथी के पांवतले कुचलने का कुकर्म करता है। तथा लोकजागरण के पद गानेवाले अंधे भिखारी को कोड़े लगाकर उसे अगले का जहाज में पहुँचाता है।' इस प्रकार नगर के रखवालदार ही अपनी मनमानी करते थे। उनपर राजाओं का नियंत्रण नहीं था। इससे जनता आतंकित रहती थी।

नरेंद्र मोहन के नाटक 'कहै कबीर सुनो भाई साधो' में पुलिसी अत्याचार का पर्दाफाश किया गया है। जमीनदार, सामंत लोगों के टुकड़ोंपर पलने की वजह से आम आदमी की दुर्गति होती थी। जमीनदार के टुकड़ों पर पलनेवाले कारिन्दे दलित आदमी को उसकी जाति की वजह से बुरी तरह पीटते है। अत्याचार के खिलाफ ड़टकर खड़े रहनेवालों की आँखो में सलाखे घुसड़कर उसे अंधा बना दिया जाता है। अन्याय के खिलाफ ड़टकर लड़नेवाले कबीर को धर्म के ठेकेदारों द्वारा पीटा जाता है। कोतवाल के अत्याचार कबीर की वाणी के जरिए पाठकों के सामने आते हैं –

''कबीर : तुम्ही बताओ मांस के लोभी गीध के सनान कोतवाल से नगर की रक्षा कैसे हो सकती है? जब बाढ़ ही बगीचे को खा रही हो तो कोई क्या करे?''[15]

मणि मधुकर के 'इकतारे की आँख' नाटक में कोतवाल की क्रूरता की परिसीमा पर प्रकाश ड़ाला है। खुद को दानिशमंद समझनेवाले कोतवाल को काशी के निवासी हमेशा सुखी नजर आते थे। वह उनका दुःख जानना ही नहीं चाहता। फिलखाने के

ाथी को पालने की जिम्मेदारी वह रोजदारी करनेवाले नाईयों, दर्जियों के मुहल्लेपर डाल ता है। इस जिम्मेदारी को पूर्ण करने में असमर्थ महंगू कोतवाल से शिकायत करने जाता है तो उसे कोड़े लगाकर उसपर ज्यादा जिम्मेदारी ड़ाल दी जाती है। इस प्रकार नगर की रक्षा करनेवाला कोतवाल ही भक्षक हो जाता है।

कोतवाल की सवारी गुजरते हुए रास्ते पर छोटे लड़केद्वारा लघुशंका की जाती है तो सिपाही द्वारा उसका सर कलम कर कोतवाल को पेश किया जाता है। अत्याचारी कोतवाल इस बात पर खुश होकर उसकी तरक्की करना चाहता है।

"कोतवाल - शाब्बास! तुम इंसाफ पसंद और अकलमंद हो। हम तुम्हारी तरक्की के बारे में सोचेंगे।"[16]

इस प्रकार कबीरयुगीन प्रशासकों की कार्य प्रणाली एकदम खोखली थी। अपराधियों को छोड़कर निरपराधियों को शिक्षा का हिस्सेदार बनना पड़ता था। उसी प्रकार वर्तमान में पुलिसी व्यवस्था में भी गुनहगारों को सजा होने के बदले निरपराध लोग ही सजा पाते हैं।

5.6.1 धर्म के ठेकेदारों से प्रशासकों की साँठ-गाँठ -

समाज में धर्म के ठेकेदार तथा प्रशासक वर्ग एक दूसरे से हाथ मिलाकर अपना स्वार्थ पूरा करते हुए पाये जाते हैं। इन दोनों की साँठ—गाँठ होने से सामान्य जन प्रशासकों के पास धर्म के ठेकेदारों के खिलाफ फरीयाद लेकर जाये तो उन्हें उलटे मार खानी पड़ती है। 'कहै कबीर सुनो भाई साधो' के साधु और तुर्क कोतवाल से मिले हुए थे। साधु और तुर्क महंतो के आखाडों से शक्ति बटोरकर कोतवाल के इशारे पर नाचते थे। क्रूर कोतवाल से हाथ मिलाकर काशी के महंत, मुल्ला मौलवी समाज के निरीह लोगोंपर अत्याचार करते थे। उनकी काली करतुतों के खिलाफ आंवाज उठानेवालों की

आवाज दबा दी जाती थी। कबीर के क्रांतिकारी विचारों में कबीर को कोई साथ न दे इस विचार से कोतवाल कबीर के पड़ोसी कुंदन के घर में आग लगवाता है। कबीर के कोतवाल के खिलाफ संघर्ष का परिणाम यह होता है कि, कोतवाल द्वारा कबीर के पुत्र कमाल को बुरी तरह से पीटा जाता है। इस बात पर खफा लोई कबीर को कोतवाल से न उलझने की सलाह देती है।

"लोई : कितनी बुरी तरह से पीटा है नासपीटे ने (कबीर की तरफ देखकर) कितनी बार कहा कोतवाल से दुश्मनी मत लो। अपने लिए न सही, बेटे के लिए सही।"[17]

तात्पर्य कबीर कालीन प्रशासक अपने विरूद्ध बगावत करनेवालों पर तरह तरह के अत्याचार करते थे। साथ ही अपना रोब जमाने के लिए उनके घरवालों को भी अनंत यातनाएँ दिया करते थे। ताकि कोई उनके खिलाफ शिकायत न कर पाये।

5.5.2 सत्ताधारियों की स्वार्थांधता -

स्वार्थभावना अधिकारियों का महत्वपूर्ण दुर्गुण है। ये कबीर काल में भी पायी जाती है। अपने अधिकारों का दुरूपयोग करनेवाले तत्कालीन कोतवालों में स्वार्थ भावना कूट कूट कर भरी हुई थी। अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए वह किसी भी हद तक जा सकते थे। कोई भी जघण्य अपराध करने के लिए हमेशा तत्पर रहते थे। सामाजिक मान्यताओं का खुले आम विरोध करनेवाले क्रांतिकारी तथा विद्रोही कबीर ने आम जनता के सामने शासकों की असलियत का भाण्ड़ा फोड़ दिया था। इस प्रकार से उन्हों ने कोतवाल की नाक में दम कर रखा था। कबीर के हाथों में जंजीर बांधकर नदी में डुबोकर, उसे जलती हुई आग में झोंककर तथा उसे मदमस्त हाथी के पैरों तले डालकर जान से मार डालने की हर मुमकीन कोशिश की थी। इससे वह कबीर की असत्य के विरूद्ध उठनेवाली आवाज को हमेशा के लिए दबाना चाहते थे। पर जब

उनके बादशाह सिकंदर लोदी स्वयं उनसे मिलना चाहते हैं, तो अपना ओहदा, खुर्सी सहिसलामत रखने के लिए कोतवाल कबीर के गुणगाण करना तथा कबीर किस तरह श्रेष्ठ है इसका खुबीसे बयान करता है। कबीर के सत्संग की जगह हर सुविधा पहुँचाई जाती है तथा इस बात का पूरा खयाल रखा जाता है कि कबीर पर किये गए जुल्म की बादशाह को खबर न मिले। वह कहता है, ''बादशाह सलामत को इस बात की खबर नहीं मिलनी चाहिए कि कबीरदास का झोंपड़ा जला दिया गया था। या उसके साथ किसी भी प्रकार की ज्यादती की जा रही है।''[18]

काशीराज भी कोतवाल की कबीर के खिलाफ की जानेवाली हरकतों पर रोक लगाते हैं। उन्हें उस बात की जानकारी थी कि कबीर के साथ बड़ी तादात में लोग जुड़े हुए हैं तथा कबीर पर जुल्म करने से वह बलवा कर बैठेंगे।

मणि मधुकर के नाटक 'इकतारे की आँख' का कोतवाल भी बहुतही स्वार्थी है। अपना स्वार्थ बटोरते बटोरते वह सामान्य जनता के प्रति बेखबर हो गया है। अपने स्वार्थ पूर्ति में कबीर को खड़ा देख वह कबीर का देहदंड़ देने की कोशिश करता है। पर कबीर के साथ हिंदू तथा मुसलमान अनुयार्यीयों को देखकर वह चुपचाप खिसक जाता है। कबीर के विरूद्ध पनपने वाली अपनी दुश्मनी का बदला शासक लोग उसके बेटे कमाल से लेते हैं। वह चाहते थे कि कबीर की दिखाई गई राह पर उसका बेटा न चले तथा उनके आदर्श तथा क्रांतिकारी विचारों को आगे न पहुँचाए इसलिए वह कमाल को स्वार्थवश ऐसे जाल में फँसाते हैं कि वह आवारा तथा निकम्मा बन कर रह जाता है। तथा खुद ही वही कमाल की बदनामी करते फिरते हैं

''बूड़ा बस कबीर का उपजा पूत कमाल।''[19]

इस प्रकार वह अपना स्वार्थ सिद्ध करते है।

तात्पर्य, अपने से दुश्मनी मोल लेने वाले के साथ धर्म के ठेकेदार तथा प्रशासक बुरी तरह से पेश आते हैं मगर उनसे अपना स्वार्थ सिद्ध होता नजर आता देख उसके साथ बड़े प्रेम से बर्ताव करते हुए पाये जाते हैं। वर्तमान समय में भी यही स्थिति पायी जाती है।

5.5.3 दहशतवाद -

. अपनी दहशत मचाकर दूसरों के जरीए कोई काम करवा लेना अधिकारी वर्ग की खासियत है। अपने ओहदे का, सत्ता का उपयोग कर कार्यों की पूर्ति की जाती है। कबीर काल में भी समाज में हर तरफ दहशतवाद बोखलाया हुआ था। समाज के मुट्ठीभर स्वार्थी लोग इस कुकृत्यों में शामिल होते थे। समाज में दहशत फैलाकर लोगों को कुचलते थे ताकि इन लोगों के करतुतों के खिलाफ कोई आवाज न उठा पाये।

भीष्म साहनी द्वारा लिखित नाटक 'कबिरा खड़ा बजार में' में काशीनगर का कोतवाल दहशतवाद का प्रतीक है। कबीर के लोकजागरण के गीत गाकर समाज में जागृति करनेवाले अंधे भिकारी नन्दू को कोडों के फटकार की सजा सुनाई जाती है। कोडों की मार से दम तोडनेवाले नन्दू की लाश को दहशत फैलाने के हेतु से गली गली, चौराहे पर घुमाया जाता है। ताकि दहशत की वजह से कि कोई कबीर को लोगजागृति में सहाय्यक न बने तथा बगावत न करें।

''कोतवाल : इस से सभी को कान हो जायेंगे । जब उसकी लाश गली गली ले जायी जाएगी और साथ में सरकारी आदमी होगा तो अपने आप दहशत फेलेगी।''[20]

इस प्रकार अत्याचारी कोतवाल दहशत का सहारा लेकर अपने उद्देश्यों की पूर्ति करना चाहता है।

तात्पर्य यह है कि कबीर काल का शासक वर्ग सामान्य लोगों में अपने नीन्दनीय कार्यों के द्वारा दहशत फेलाता था ताकि समाज के लोग उनके विरूद्ध मुँह से शब्द भी न निकाल पाये। वर्तमान समाज में भी यही कार्य बड़ी निष्ठापूर्वक किया जा रहा है।

5.7 शोषण -

शोषण हर युग की सामान्य जनता के जीवन की गंभीर समस्या है। कबीरकाल भी इसके लिए अप्वाद नहीं है। कबीर के समय हर क्षेत्र में जनता का शोषण होता था। हर प्रकार से इस प्रक्रिया ने हाथ पैर पसारे हुए थे। साहुकार तथा बनिये अपने से छोटे व्यापारियों का शोषण कर रहे थे। समाज में उच्चवर्ग के लोगोंद्वारा निम्नवर्ग के लोगों का शोषण हो रहा था। गाँव के मुखिया तथा समाज़ में स्वयं को सर्वश्रेष्ठ समझनेवाले ब्राह्मण, महंत आदि गाँव के निरीह लोगों का तत्परता से शोषण कर रहे थे। कामचोर, चाटुककार अपने से उच्च पदस्त लोगों की खुशामद कर अपनी पौ बारह कर लेते थे मगर सादगीपूर्ण जीवन बिताने वाली जनता शोषण का शिकार हो रही थी। विवेच्य नाटकों में चित्रित किया हुआ पात्र कोतवाल निरीह लाचार जनता का शोषण करनेवाले शासक वर्ग का प्रतीक है। जीसे अपने स्वेच्छाचारिता से सही गलत वर्तन का अंदाजा नही रहता। सिकंदर लोदी की मान्यता से उनकी नियुक्ति कोतवाल पद पर होती है। काशिराज भी कोतवाल से डर कर ही रहते हैं। जनता को शासकों के शोषण के विरूद्ध जागृत करनेवाले कबीर का झोंपड़ा जला दिया जाता है। वह कबीर तथा उसके साथियों को हर प्रकार से त्रस्त करता है। कोतवाल की बीबी का झुमका साले द्वारा ही चोरी हो जाता है मगर कोतवाल जुलाह पट्टी में धरपकड़ मचा देता है। ''हर चोरी ड़कैती गरीबों के सर मढ़ दी जाती है।''[21] इससे उस समय की शोषण की प्रक्रिया पाठकों के सामने आती है।

तात्पर्य, समाज के उच्चवर्णीय लोग प्रशासकों को सर आँखो पर बिठाकर अपना काम निकलवा लेते हैं मगर वही सामान्य जन शोषण की चक्की में पीसते नजर आते हैं। यही अवस्था आज भी हरतरफ पायी जाती है। अमीर लोग अधिकारियों को रिश्वत देकर अपनी कार्यसिद्धी करते हुए पाये जाते हैं परंतु गरीब, बेबस लोगों को यह बात अनाकलनीय होने के कारण उनके कार्य बरसों से बंद फितों में पड़े हुए नजर आते है।

5.7.1 लूटपाट-

दहशत, शोषण की तरह लूटपाट भी मध्ययुगीन शासकों की विशेषता थी। युद्ध के बाद होनेवाली लूटपाट में वह सोने—चाँदी के जेवरात, अनगिनत हिरे, मोतियों तथा रूपयों के साथ साथ सुंदर स्त्रियों को भी जबरदस्ती उठा ले जाते थे। 'कबिरा खड़ा बजार में' नाटक में बादशहा तिमूर लंग ऐसी ही लूटपाट करता हुआ पाया जाता है। अपने साम्राज्य विस्तार के लिए तिमूर लंग दूसरे राज्यों पर आक्रमण करता है। विजयी होनेपर उसके सिपाही असामान्य लूटपाट करते हैं। औरतें, छोटे बच्चे भी उसकी घिनौनी हरकत से बच नहीं पाते हैं। बच्चों को बंदी बनाया जाता है। तथा हसीन औरतों को हरमों में दाखिल किया जाता है। निम्न संवादों से शासकों की शोषणनीति हमारे सामने आती है –

"ब्रशीरा : पहले तो तिमूर के बहादूर सिपाही लूटपाट करते रहे। दिल्ली की गलियों में घुसकर औरते उठाते रहे थे।"[22]

आगे वह कहता है –

"ब्रशीरा : तिमूर बादशाह जिस शान से आया, उससे दुगनी शान से लौटा ... आया था तो जल्लाद ही जल्लाद उसके साथ थे, लौटा तो हसीन से हसीन औरतें उसके साथ थी।"[23]

सत्ताधारियों के खिलाफ बगावत की आवाज उठानेवालों का यथोचित शोषण किया जाता था। कबीर लोगों में क्रांतिकारी चेतना जगाने का कार्य करते हैं। समाज के लोगों को शासकों की बेईमानी के खिलाफ उकसाते हैं। लोगों में क्रांतिकारी चेतना जगाने का कार्य करते हैं। 'कबिरा खड़ा बजार में' का कोतवाल तथा पण्डे मौलवी कबीर तथा उसके सहचरों को जानसे मार डालना चाहते हैं। क्योंकि वह चाहते है कि किसी भी तरह से सत्य की आवाज बन्द हो जाए। यह एक प्रकार का शोषण ही तो है।

"कबीर : हम स्वयं मिलकर समागम लगायेंगे । कोतवाल तो यही चाहता है कि हम चुप हो जाए। हमारी आवाज बन्द हो जाये। पण्डे मौलवी भी यही चाहते हैं।"[24]

इस तरह मध्यम युगीन सत्ताधारी तथा अधिकारी वर्ग लूटपाट में औरतों तथा बच्चों को भी बक्श नहीं देते तथा उनके साथ बड़े बेरहमी से पेश आते हुए पाये जाते हैं।

5.7.3 वासनालोलूपता-

भारत भूमि पर भले ही देशी राजाओं का राज्य हुआ करता था पर उनपर भी मुगलों की सल्तनत हुआ करती थी। अतः देशी नरेश नाममात्र राजा थे, उन्हें मुगलों की गुलामी करनी पड़ती थी। क्यों कि उस वक्त हिंदू लोग शासित थे तथा उनपर मुस्लिम शहंशाह सिकंदर लोदी की अंमलदारी थी। कबीर काल के शासक अपनी वासनालोलूपता के लिए भी बदनाम है। शासक वर्ग औरतों की रक्षा करने के बजाय उन्हें अपनी वासना पूर्ति का लक्ष्य बनाता था। समाज की सामान्य स्त्रियों पर अपना अधिकार जमाने के साथ साथ वह अपने राजाओं की औरतों तथा लड़कियों पर भी बुरी नजर रखते थे।

खुद को काशीनगर का सर्वेसर्वा समझनेवाला कोतवाल वासना की गर्त का कीड़ा है। 'कहै कबीर सुनो भाई साधो' में कबीर के कविता गाकर समाज में जागृति का कार्य करनेवाली रमजनियापर कोतवाल की बूरी नजर है। वह इस 'मीठी छुरी' को अपने पास रखना चाहता है। कबीर के पीछे अपनी जवानी बरबाद न करने की सलाह देता है। यह बात निम्न संवाद से स्पष्ट होती है –

''कोतवाल : (रमजनिया से) उस जुलाहे के लिए क्यों अपना खूबसूरत जिस्म बरबाद कर रही हो?''[25]

मगर रमजनिया जब उसे फटकारती है तो वह उसे हवालात में बंद कर देता है।

मणि मधुकर के 'इकतारे की आँख'' का कोतवाल अपना अधिकार काशी नरेश पर भी जमाता दिखाई देता है। उसकी वासनामय दृष्टिसे काशी नरेश की बेटियाँ भी नही छूट पाती । कोतवाल को किसी का डर नहीं है। तथा ना ही उसे कोई रोक लगा सकता हैं, क्यों कि वह सिकंदर लोदी का विश्वासपात्र माना जाता है।

वासनालोलूप कोतवाल के संबंध में इस नाटक के संवाद निम्न प्रकार है –

''तिसरा : कोतवाली पर किसी का क्या जोर वह तो काशी नरेश की लौंड़ियों पर भी हाथ साफ कर जाता है।''[26]

उसी प्रकार आई.ए.एस. ऑफिसर गुप्ताही नाट्‌य संस्था को ग्रांट लेने के लिए आयी हुई अभिनेत्री के साथ बदतमीजी से पेश आते हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि कबीर काल के शासक वासना के कीचड़ से लथपथ हैं। ठीक उसी प्रकार आज के अफसर भी वासना के दलदल में फँसे हुए हैं।

5.8 शासकीय प्रतिनिधियों की अय्याशी –

शासक वर्ग का कार्य होता है कि जनता की सुख सुविधाओं को ध्यान में लेकर

शासन करें, अपने अधिकारों का योग्य उपयोग कर समाज में सुव्यवस्था लाने की कोशिश करें। यही उनका आद्य कर्तव्य होता है। पर कहीं कहीं शासन वर्ग अपने कर्तव्यों से पलायन करता हुआ दिखाई देता है। मणि मधुकर द्वारा लिखित 'इकतारे की आँख' नाटक का कोतवाल भी इसी प्रकार का व्यक्ति है। जो अय्याश शासक वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। सिपाही द्वारा कबीर को दण्डित करने को उकसाने पर कोतवाल अपनी अतिव्यस्तता का बयान करता है।

''कोतवाल : क्या क्या करें हम? सुबह उठते ही गुसल करे फिर खायें, फिर जुम्हाई लें, फिर पान खायें, फिर जुम्हाइ ले फिर शतरंज खेलें, फिर जुम्हाई ले और फेसला भी हमीं करें।''[27]

ठाकूर विनायक प्रसाद सिंह अपने भ्रष्टाचार को पचा नहीं पाते। वह फूलकर कुप्पा गणपती हो जाते हैं। तथा उनकी आँतो में सड़न होने की वजह से छाती में जलन होने लगती है। प्रकृति के अस्वास्थ के कारण उनपर उपचारों के लिए डॉक्टरों का पैनल बनाया जाता है तथा व्ही.आय.पी. ट्रीटमेण्ट शुरू कर दी जाती है। इस प्रकार अपने अधिकारों का अयोग्य उपयोग कर ये लोग अय्याशी करते हुए पाये जाते हैं।

काशीनगर का कोतवाल अपनी कोतवाली का अनुचित उपयोग कर शहरे की सुंदर लड़कियों पर डोरे डालता दिखाई देता है। मंत्र तंत्र की विद्या को हासिल की हुई शहर की महाभैरवी नामक महिला की सुंदर शिष्याओं पे वह आसक्त है। यह निम्न संवादो से स्पष्ट होता है –

''दूसरा : उनकी और उनकी शिष्याओं को सभी मुद्राओं का ज्ञान है। लेकिन आजकल वहाँ नगर कोतवाल घुस गया है। वह चंद्रिका पर डोरे डाल रहा है।''[28]

इस प्रकार शासन तंत्र अपने अधिकारों का विपरित उपयोग करके अय्याशी करता हुआ दिखाई देता है। आज का अधिकारी वर्ग भी दफ्तरों में कामकाज के नामपर चाय पीने और गप्पे हाँकने में फिजूल वक्त खर्च करता हुआ दिखाई देता है। गायक के कथा गायन द्वारा इस बात को पुष्टि मिलती है –

''गायक एक : क्या कहूँ कैसे कहूँ कब और आगे का व्यवहार रोज गुलछर्रे उड़ाए शहर काशी कोतवाल।''[29]

यहाँ स्पष्ट है कि, कबीर काल का शासक वर्ग जनता के हित की रक्षा करने के बजाय अपनी सुख–सुविधाओं की तरफ अधिक ध्यान देता था। शासक वर्ग की यह गलत परंपरा वर्तमान काल में भी खंड़ित नहीं हो पई है।

5.9 भ्रष्ट न्याय व्यवस्था -

न्याय माँगने वाले लोगों को उचित न्याय देना न्याय व्यवस्था का कर्तव्य होता है। आजके जमाने में राजनीति तथा न्याय व्यवस्था दोनों अलग अलग क्षेत्र माने जाते हैं। पर कबीर काल में राजनीति एवं न्याय व्यवस्था अलग न होकर एक दूसरे से संबंधित थे। मुगल शासकों द्वारा नियुक्त किया गया कोतवाल ही नगर की रक्षा तथा न्याय देने का कार्य करता था। उसपर लोदी बादशाह की अंमलदारी थी। उन्हों के तहत वह न्याय देने का कार्य करता था। कबीर काल में न्याय व्यवस्था उच्चवर्गीय, धर्म के ठेकेदरों द्वारा भ्रष्ट हो चुकी थी। उनके खिलाफ न्याय माँगनेवालों को न्याय मिलने के बजाय अनंत यातनाएँ ही मिलती थी। कोतवाल, ब्राह्मण, मुल्ला, मौलवी आदि उनके उनके समाज के नेतागण ही तो हैं। ये लोग आम जनता पर अत्याचार करते हुए पाये जाते हैं। तथा इनके खिलाफ कोई फरीयाद करें तो उसे कड़ी सज़ा दी जाती है। इनके खिलाफ सामान्य जनता में असंतोष फेला हुआ है। मन ही मन में वह उन्हें कोसते हैं पर कर कुछ नहीं पाते। 'इकतारे की आँख' में रैदास तथा कबीर की माँ नीमा इस

भ्रष्ट न्याय व्यवस्था के प्रति आक्रोश करते हुए दिखाई देते हैं।

रैदास की लापता पत्नी के बारे में कबीर द्वारा पूछताछ करने पर महंतो की हरकतों के बारे में रैदास से जानकारी प्राप्त होती है। सुंदर औरतों को मठ में उठा ले जाकर उन्हें बेआबरू कर वहीं दफना देना मंहतो के नित्य कर्म हैं। इस बातपर न्याय माँगनेपर रैदास को न्याय नहीं मिलता। इसपर आक्रोश व्यक्त करते हुए कबीर कहते हैं, "ओह, यह कैसा शहर है? यहाँ गरीब की कोई सुनवाई नहीं?"[30] रैदास कबीर को समझाते हैं तथा स्पष्ट करते हैं कि इस समाज में सामान्य लोगों को न्याय से हमेशा वंचित रहना पड़ता है। रैदास द्वारा कबीर के घरवालों के साथ हुए हादसे की कबीर को जानकारी दी जाती है। बाजार में लेन देन के भाव को लेकर कबीर के पिता नूरा और बनिये का झगड़ा हो जाता है। ब्राह्मण जात को गाली गलौज करने के झुठे आरोप में कबीर के पिता नूरा को जान से मार डाला जाता है। इस बात पर फरीयाद करने वाली नीमा को भी जान से मारने की कोशिश की जाती है। उनकी बस्तियों में आग लगाकर निष्पाप लोंगों की हत्या कर दी जाती है।

कबीर की कठोर वाणी से परेशान ऊँची बिरादरी के नेताओं द्वारा कबीर के विचारों का विपरित अर्थ निकालकर उन्हें पीटा जाता है। ब्राह्मण जाति का प्रतिनिधित्व करनेवाले पुजारी का कबीर द्वारा रास्ता रोकने पर गुस्से से तिलमिला उठा पुजारी कबीर के ऊपर से रथ ले जाता है। इस बात की जानकारी कोतवाल को देने पर वह इस बात को हवा में उड़ा देता है। तथा पुजारी के साथ मिलकर कबीर को मारने का प्रयत्न करता है। कबीर की व्यथा को मणि मधुकर जी ने अपने नाटक 'इकतारे की आँख' में विशद किया है,

"गायक : सन्तो देखऊ जग बौराना,
साांच कहो तो मारन धावै, झूठे जग पतियाना,
सन्तो देखऊ जग बौराना"[31]

इस प्रकार यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि कबीर काल की न्याय व्यवस्था में गरीब तथा सामान्य जन को न्याय से वंचित रहना पड़ता था। अधिकारी वर्ग आम जनता को न्याय नहीं मिलने देते थे। इस वजह से प्रजा के मन में न्याय व्यवस्था के प्रति असंतोष भरा हुआ था। वर्तमान न्याय व्यवस्था भी इसी दौर से गुजरती हुई पायी जाती है।

निष्कर्ष :

निष्कर्ष रूप में कहा जा कसता है कि, विवेच्य नाटकों में कबीर तत्कालीन प्रशासक वर्ग द्वारा सामान्य जन पर होने वाले अन्याय को चुनौती देते हुए पाये जाते हैं। राजनीति में स्वार्थी, अवसरवादी नेता जनता के प्रति अपने कर्तव्यों को भूलकर अपने स्वार्थ के पीछे भागते हुए तथा उनकी पूर्ति करने के लिए आम आदमी की जिंदगी के साथ खिलवाड़ करते हुए पाये जाते हैं।

चुनाव में जीत हासिल करने के लिए सांप्रदायिकता का सहारा लेने वाले नेता, भ्रष्टाचार के आगे नतमस्तक हुए पाये जाते हैं। रिश्वत देकर अपने कार्य की पूर्ति करने वाले नेतागण युवापीढ़ी का अपने स्वार्थ वश इस्तमाल करते हुए दिखाई देते हैं। राजनेताओं की आँखे चकाचौंध करने वाली प्रतिष्ठा, ऐश्वर्य को देखकर युवावर्ग उनके पीछे अपना भविष्य बरबाद करता हुआ दिखाई देता है।

दहशत के बल पर अय्याश शासक वर्ग सामान्य जनता का शोषण करता हुआ पाया जाता है। इन सारे अत्याचारों से त्रस्त जनता को धर्म के ठेकेदारों एवं प्रशासकों की सांठ–गांठ की वजह से न्याय से वंचित रहना पडता है। इस तरह राजनेता तथा प्रशासक वर्गों के अत्याचारों से पीड़ित आम जनता का चित्रण इस अध्याय में मिलता है।

❖ संदर्भ सूची ❖

				पृष्ठ
1.	इकतारे की आँख	:	मणि मधुकर	41
2.	— वही —			36
3.	कबिरा खड़ा बजार में	:	भीष्म साहनी	90
4.	कहै कबीर सुनो भाई साधो	:	नरेंद्र मोहन	68
5.	इकतारे की आँख	:	मणि मधुकर	27
6.	— वही —			33
7.	— वही —			81
8.	— वही —			81
9.	— वही —			53
10.	— वही —			28
11.	— वही —			29
12.	कबिरा खड़ा बजार में	:	भीष्म साहनी	25
13.	कहै कबीर सुनो भाई साधो	:	नरेंद्र मोहन	77
14.	— वही —			74
15.	— वही —			28,29
16.	इकतारे की आँख	:	मणि मधुकर	48
17.	कहै कबीर सुनो भाई साधो	:	नरेंद्र मोहन	55
18.	कबिरा खड़ा बजार में	:	भीष्म साहनी	96
19.	इकतारे की आँख	:	मणि मधुकर	92
20.	कबिरा खड़ा बजार में	:	भीष्म साहनी	
21.	— वही —			56
22.	— वही —			56
23.	— वही —			56
24.	— वही —			50
25.	कहै कबीर सुनो भाई साधो	:	नरेंद्र मोहन	70
26.	इकतारे की आँख	:	मणि मधुकर	17
27.	— वही —			72
28.	— वही —			16
29.	— वही —			82
30.	— वही —			30
31.	— वही —			55